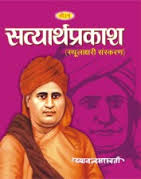
**ओ३म्**

**‘ईश्वर व जीवात्मा विषयक यथार्थ ज्ञान की प्राप्ति का सरल उपाय’**

**-मनमोहन कुमार आर्य, देहरादून।**

 ईश्वर के सत्य स्वरूप का ज्ञान विद्वानों के उपदेशों को सुनकर अथवा वेद वा वैदिक साहित्य के अध्ययन से प्राप्त होता है। पूर्ण नहीं अपितु कुछ मात्रा में यह ज्ञान वैदिक धर्मी माता-पिताओं की सन्तानों को भी परम्परा व संगति से प्राप्त हो जाता है। आजकल के धार्मिक कथाकारों के उपदेशों व प्रवचनों पर दृष्टि डालें तो ज्ञात होता है कि वह ईश्वर व जीवात्मा के सत्य व शुद्ध स्वरुप का यथार्थ वर्णन नहीं करते अपितु अपने अपने मत व आस्थाओं के अनुसार प्रचार करते हैं। उन्हें यह भी ध्यान रहता है कि उन्हें अपने अज्ञानी भक्तों को गुरू व महापुरुष के रूप में स्थापित करना है। उनके भक्तों से संगति करने पर मनोवैज्ञानिक आधार पर ज्ञात होता है कि उन्हें कुछ ऐसी शिक्षा दी गई है कि उनके गुरु-महाराज ही सबसे अधिक ज्ञानी हैं। अन्य गुरुओं की बात सुनना व उनकी विशेषताओं को जानने का वह प्रयास ही नहीं करते हैं। इसे ज्ञान घोटाला या बौद्धिक पतन ही कह सकते हैं। ज्ञानी तो कोई भी मनुष्य हो सकता है। ज्ञानी बनने के लिए यह आवश्यक है कि मनुष्य सत्य ज्ञान की प्राप्ति का संकल्प धारण किये हुए हो और वह केवल एक पुरूष व गुरु से ही अपने आपको न बांधे अपितु उसे जहां से जो भी अच्छी बात पता चले, उसे प्राप्त कर उसके आगे और अनुसंधान व अध्ययन कर उसे परिपक्व व समृद्ध करे। हम यह भी अनुभव करते हैं कि सभी धार्मिक कथाकारों को अपनी अपनी मान्यताओं का एक पुस्तक अवश्य लिखना चाहिये जैसा कि महर्षि दयानन्द ने **‘स्वमन्तव्यामन्तव्यप्रकाश’** एवं **‘आर्योद्देश्यरत्नमाला’** नाम से दो लघु पुस्तकें लिखी हैं। आज भी यह पुस्तकें मात्र एक या दो रूपये में मिल जाती हैं। इन पुस्तकों में धर्म के सभी सिद्धान्तों को बहुत ही संक्षिप्त रूप से परिभाषित किया गया है। इसको पढ़कर जब अन्य मतों के आचार्यों व उनके अनुयायियों को सिद्धान्तों व आचरणों को देखते हैं तो हमें यह ज्ञात होता है कि वह सभी अज्ञान व भ्रान्तियों से भरे हुए हैं। एक ही विषय में दो सत्य व दो सिद्धान्त जो परस्पर विरोधी हों, सम्भव नहीं हैं। हां, सिद्धान्तों की व्याख्या करने पर शब्दों में अन्तर आ सकता है परन्तु भाव समान ही रहते हैं। विज्ञान का अध्ययन करने पर हम जान पाते हैं कि संसार के सभी वैज्ञानिकों का एक ही विषय पर एक ही सिद्धान्त है। सारी दुनियों में वैज्ञानिक सिद्धान्त एक समान है। इसे देखकर क्या यह विदित नहीं होता कि मनुष्यों के धार्मिक आचरण व उपासना के सिद्धान्त भी एक ही होने चाहियें। **हमें तो वेद व वैदिक साहित्य पढ़कर यही उपयुक्त प्रतीत होता है कि संसार के सारे मनुष्य एक ही परमात्मा की सन्तानें हैं जो अपने अपने पूर्व जन्मों के प्रारब्ध के अनुसार सुख-दुःख रूपी भोग भोगने के लिए ईश्वर द्वारा उत्पन्न किये गये हैं। इनकी उत्पत्ति का कारण सत्य का ग्रहण करना व असत्य का त्याग करना है।** यह कार्य इनको शिक्षित कर ही किया जा सकता है। उपदेश व पुस्तकों का अध्ययन भी शिक्षा का एक प्रकार है। यदि मनुष्य को सत्य उपदेशक और सत्य पुस्तकें प्राप्त हो जाये तो उसे अपना जीवनयापन व सत्य सिद्धान्तों पर आधारित धर्म कर्म करने में सुविधा होती है, हमें भी हुई है, और इससे सामाजिक व वैश्विक सुख व शान्ति स्थापित किये जा सकते हैं।

 **उपदेश, प्रवचन, व्याख्यान आदि शिक्षा व ज्ञान प्राप्ति का मुख्य सरलतम मार्ग है। इसके लिए सत्य उपदेशक व ज्ञानी पुरुष की आवश्यकता होती है जो निष्पक्ष, स्वार्थ रहित, ईश्वर भक्त, वेदभक्त, देशभक्त, समाजसेवी, मुमुक्षु, परोपकारी, सेवाभावी, दानीस्वभाववाला, एक ईश्वरोपासक, दम्भ व अहंकार से रहित, धन व सम्पत्ति से दूर रहने वाला, अपरिग्रही, सुख-सुविधाओं का न्यूनतम मात्रा में सेवन करने वाला, पुरुषार्थी, तपस्वी स्वभाव वाला होने के साथ वेद व वैदिक साहित्य से पूर्णतया परिचित व उसका यथार्थ ज्ञान रखने वाला हो। इसके लिए यह भी आवश्यक है कि वह संसार के सभी मनुष्यों के रंग व रूपादि के पक्षपात से रहित होकर सबको एक परमात्मा की सन्तान समझे।** यदि ऐसा नहीं होगा तो न तो वह सच्चा ज्ञानी हो सकता है और न ही वह उसका प्रचार कर सकता है। आजकल के धार्मिक प्रचारक प्रायः व्यासायिक प्रवृत्ति के देखे जाते हैं जिनके पास प्रभूत धन व सम्पत्ति है और जो सुखी व ठाट-बाट का जीवन बिताया करते हैं, अतः उनमें सच्चा ज्ञानी धार्मिक गुरु होने की पात्रता नहीं है। उनका जीवन ऐसा है कि महाभारत काल तक के हमारे सभी ऋषियों व तपस्वियों ने ऐसा जीवन नहीं बिताया जो आजकल के धार्मिक प्रचारकों से कहीं अधिक ज्ञानी व विद्वान थे तथा योग व समाधि तक को जिन्होंने अपने ज्ञान व पुरुषार्थ से सिद्ध किया हुआ था। अतः हमें लगता है कि आजकल के सभी भक्तों को अपने धर्म प्रचारकों व गुरुओं की परीक्षा लेनी चाहिये कि वह कहां तक सदगुरु की भूमिका में हैं अथवा नहीं। इसका सरलतम उपाय यह है कि सभी धार्मिक भक्त व श्रद्धालु मनुष्य महर्षि दयानन्द का जीवन चरित पढ़े और उनके बाद हुए सच्चे धार्मिक विद्वानों व उपदेशकों जिनमें से कुछ के नाम हैं, स्वामी श्रद्धानन्द, पं. लेखराम, पं. गुरुदत्त विद्यार्थी, स्वामी दर्शनानन्द सरस्वती, पं. शिवशंकर शर्मा काव्यतीर्थ, स्वामी सर्वदानन्द सरस्वती, पं. ब्रह्मदत्त जिज्ञासु, स्वामी स्वतन्त्रतानन्द, स्वामी सर्वानन्द सरस्वती, पं. भगवद्दत्त, पं. रामनाथ वेदालंकार, स्वामी विद्यानन्द सरस्वती, स्वामी अमर स्वामी सरस्वती, पं. गंगाप्रसाद उपाध्याय, स्वामी सत्यप्रकाश सरस्वती आदि के जीवन चरितों का अध्ययन कर व इनसे आजकल के धार्मिक गुरुओं की जीवनचर्याओं व उनकी शिक्षाओं से तुलना कर सत्य को ग्रहण करें। हमें लगता है कि शायद कोई भी आधुनिक गुरु इन महापुरुषों के जीवन चरित के अनुरुप नहीं मिलेगा। यदि इन पूर्व हुए महापुरूषों के जीवन चरित व इनके ग्रन्थों वा उपदेशों का अध्ययन कर लिया जाये तो फिर किसी को धार्मिक गुरु बनाने की आवश्यकता ही नहीं रहेगी। वह पाठक व अध्येता स्वयं ही गुरु बन जायेगा और उसे ईश्वर व जीवात्मा का सत्यस्वरुप ही नहीं अपितु इनकी प्राप्ति का सत्य व सरलतम मार्ग भी ज्ञात हो जायेगा और इससे उनका जीवन सफल हो सकेगा। हां, इसके साथ-साथ योग की शिक्षा के लिए किसी योगाभ्यासी गुरु की शरण लेकर उससे ध्यान की विधि सीखी जा सकती है जिससे की वह ईश्वर का ध्यान कर समाधि अवस्था को प्राप्त होकर अपने जीवन को अधिकतम सुख व परमानन्द की अवस्था में पहुंचा सके।

उपदेशक के बाद ईश्वर व जीवात्मा विषयक सत्य ज्ञान की प्राप्ति का उपाय सत्य ज्ञान पर आधारित पुस्तकें हैं। इस श्रेणी में बहुत सी पुस्तकें हो सकती है। महर्षि दयानन्दकृत सत्यार्थप्रकाश इन सभी पुस्तकों में प्रमुख एक पुस्तक है। इसके बारे में देश व विश्व में भ्रान्तियां विद्यमान हैं जिन्हें वेदेतर धर्मियों ने अपने अज्ञान व स्वार्थ के कारण फैलाया है। निष्पक्ष भाव से विचार करने पर लगता है कि संसार के जितने मत-मतान्तर हैं वहां ईश्वर व जीवात्मा का सत्य व शुद्ध स्वरूप उपलब्ध न होने तथा इसी कारण से उपयुक्त उपासना पद्धति न होने के अभाव में उनके अनुयायी अधिकांश व सभी मनुष्य धर्म-अर्थ-काम-मोक्ष के लाभ से वंचित रहते हैं और उनका यह मनुष्य जन्म व्यर्थ व भावी जन्मों में अवनति एवं दुःख के रूप में ही परिणत होता है। इसके लिए केवल एक ही उपाय है कि सभी मतों के विद्वान अपने धार्मिक आग्रहों का त्याग कर सच्ची जिज्ञासा से ईश्वर व जीवात्मा के सत्य स्वरूप व सत्य व्यवहार व आचरण को जाने और ईश्वर की इच्छा व अपेक्षा के अनुरूप ही अपना जीवन बनायें। यही मनुष्य का कर्तव्य व धर्म हैं। **वैदिक धर्म इसी धर्म का मूर्त रूप है जिसका प्रचार महर्षि दयानन्द जी ने किया।** उनके समकालीन व परवर्ती लोगों ने अपने-अपने अज्ञान पर आधारित परम्परागत व रूढि़गत विचारों के कारण उनका बहिष्कार ही किया। परम्परा व रूढि़यों के कारण मनुष्य पर जो प्रभाव देखा जाता है वह यही होता है कि मनुष्य अपनी मिथ्या मान्यताओं के विरुद्ध सत्य मान्यताओं पर विचार भी करना नहीं चाहता व उनकी उपेक्षा ही करता है। इस पर यदि उसके सबसे निकट परिवारजन व तथाकथित धर्मगुरू आदि उसे सत्परामर्श न दें तो फिर उससे सत्य को ग्रहण कराना और असत्य को छुड़वाना असम्भव कार्य हो जाता है। यही हमें वर्तमान समय में हो रहा अनुभव होता है।

**लेख को विराम देने से पूर्व हमें यह बताना है कि धर्म का सम्बन्ध मनुष्य की आत्मा की उन्नति से है।** आत्मा की उन्नति मनुष्य की धन-सम्पत्ति व शारीरिक स्वास्थ्य की उन्नति से सर्वथा पृथक है। आत्मा की उन्नति का तात्पर्य मनुष्यों के श्रेष्ठ आचरणों व ईश्वर की सरलतम व कारगर विधि से उपासना करने से है जिससे उपासना से होने वालो लाभों का प्रभाव मनुष्य के स्वभाव व आचरण में परिलक्षित हो। इसका तात्पर्य है कि मनुष्य सत्यवादी व सत्याचारी बने। मिथ्याचार का सर्वथा त्याग कर दे जिसमें रिश्वत, भ्रष्टाचार, दूसरे के अधिकारों का हनन, अन्याय व शोषण आदि कार्य व आचरण सम्मिलित हैं। इसके विपरीत धार्मिक मनुष्य वह होता है जो श्रेष्ठाचार करते हुए स्वात्मोन्नति सहित देश, समाज सहित प्राणी मात्र की उन्नति व विकास में सहयोगी होता है। इसके लिए सच्चे महापुरूष महर्षि दयानन्द जी आदि के जीवन से प्रेरणा लेते हुए वेद, उपनिषद, दर्शन, सत्यार्थप्रकाश, ऋग्वेदादिभाष्यभूमिका व योग आदि का अध्ययन व उसका जीवन में आचरण करना ही सर्वांगीण मनुष्योन्नति का कारण है। आजकल यह सभी ग्रन्थ हिन्दी में भाष्य व अनुवाद सहित उपलब्ध हैं जिनसे लाभ उठाया जा सकता है। हम आशा करते हैं कि पाठक लेख में प्रस्तुत विचारों से सहमत होंगे।

**-मनमोहन कुमार आर्य**

**पताः 196 चुक्खूवाला-2**

**देहरादून-248001**

**फोनः09412985121**